काशी का जुलाहा

एक जीवनी की तलाश

सी. एन. सुब्रह्मण्यम

"बेहद के मैदान में...

. . .रहा कबीरा सोय।" लेकिन इतिहासकार भी अपने पेशे से मजबूर है, उसे तो कबीर को हद के मैदान में ही खोजना है। तो फिर "मेरा तेरा मनुआ कैसे इक होई रे! मैं कहता हौं आखिन देखी तू कहता कागद की लेखी..."

जो आंखन देखी है वह जीवंत है, जीवंत यानी विकासशील और परिवर्तनशील है। आपने कल जो देखा था और आज जो देख पाते हैं, दोनों में फर्क होता है। आखिर दृश्य और दृष्टा दोनों ही बदलते हैं! इसके विपरीत कागद में जो बात लिखा जाती है वह स्थिर है, मृत है। या कम से कम स्थिर होने का दावा करती है। सो इतिहासकार और कबीर की यह मुलाकात काफी दिलचस्प रहेगी, यह आशा बंधती है।

उत्तर भारत के लोगों के चिंतन और व्यक्तित्व पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव कबीर का है। जहां पाखंड पर तीखा प्रहार करना हो या सभी धर्मों के संकीर्ण नज़रिए को तोड़ने (से उबरने) की बात आती है, जहां प्रेम की सार्वभौमिकता को स्थापित करने की बात आती है, तो कबीर स्वाभाविक रूप से याद आते हैं; अनायास ही उनके साखी या



पद याद आते हैं और सुनाए जाते हैं – कभी कभी स्थिति के अनुरूप बदले भी जाते हैं। इस तरह लोगों के दिलोदिमाग पर छा जाने वाले को अतीत में खोजना और उसकी जीवनी का गठन करना एक खासा मुश्किल काम है। मुश्किल इसलिए क्योंकि ऐसे लोगों की जीवनियां भी इसी तरह कही सुनी बातों से बनती हैं। और बेचारा इतिहासकार, वो तो ठहरा कागदवाला!

प्रचलित मान्यताओं के हिसाब से कबीर के जीवन की मुख्य बातें इस प्रकार थीं:

"सन 1400 के आसपास एक ब्राह्मण विधवा की कोख से जन्म लेना, मां के द्वारा बनारस के घाट पर त्यागा जाना, नीरू और नीमा नाम के मुसलमान जुलाहे दंपत्ति द्वारा लालन पालन, फिर बनारस के घाट पर रामानंद से स्पर्श और मंत्र दीक्षा पाना, रामानंद के प्रभाव से भक्ति योग में लीन होकर लोकभाषा में अनेक साखी, रमैनी पद आदि की रचना. . . काशी के पंडितों का कबीर से त्रस्त होकर काज़ी और सुल्तान सिकंदर लोधी से शिकायत करना, कबीर द्वारा सुल्तान के आगे झुकने से इन्कार और उन्हें सज़ाए-मौत सुनाया जाना, कई तरह से मारने के प्रयास के बावजूद कबीर का चमत्कारी रूप से जीवित रहना, मगहर में 100 साल से अधिक की उम्र में प्राण त्यागना, उनके अवशेषों को लेकर हिंदुओं और मुसलमानों के बीच संघर्ष और चमत्कारी रूप में शव का फूल के दो ढेरों में बदल जाना, एक का हिंदू विधि से जलाया जाना और दूसरे का मुसलमानों की तरह दफनाया जाना .. आदि आदि।"

अब इतिहासकार को यह देखना है कि उस मध्य युगीन अक्खड़ भक्त का जीवन वास्तव में कैसा था; इन दंत कथाओं में उस कबीर के जीवन की कोई बात झलकती भी है कि नहीं? इतिहासकार के पास कोई टाईम मशीन तो है नहीं कि वह सन 1400 के कबीर के घर जाकर पूरा ब्यौरा इकट्ठा कर लाए। (यह और बात है कि अगर टाईम मशीन मिल भी जाए और वह

कबीर के संग: यह चित्र एक मुगलकालीन चित्र का लघु अंश है। इसमें कबीर के साथ कई और संत बैठे हुए हैं। बाएं से: सबसे पहले रैदास फिर पीपा, नामदेव, सेनानाई, कमाल (कबीर का बेटा), गोरखपंथी, कबीर, पीर मछन्दर, गोरखनाथ, जदरू, और लालस्वामी।
माना जाता है कि इस चित्र को शाहजहां के बेटे दाराशिकोह ने 1650 के आसपास बनवाया था। वर्तमान में यह चित्र लंदन स्थित विक्टोरिया एंड अलबर्ट संग्रहालय में रखा हुआ है।

वहां पहुंच भी जाए तो क्या तीर मार लेगा?) उसे तो कागद की लिखी जानकारी चाहिए। जितना पुराना कागद उतनी अच्छी जानकारी। जानकारी पत्थर पर खुदी हो तो और भी अच्छी। कबीर ने कागद मसी* का उपयोग नहीं किया। किया भी हो तो 600 साल में उसकी क्या हालत होती। (कुछ साल पहले पं. श्याम-सुंदरदास ने कबीर पदों की एक पांडुलिपि खोज निकाली थी; जिसमें लिखा है कि इसे संवत 1561 में पूरा किया गया। लोक परंपरा के अनुसार कबीर संवत 1575 में मरे। सो यह मान लिया गया कि यह पांडुलिपि कबीर के जीवनकाल में तैयार की गई थी। लेकिन बाद की शोध से पता चलता है कि यह तारीख प्रामाणिक नहीं है।)

कबीर ने क्या कहा?

कबीर के जीवन के बारे में ज़िक्र हमें कबीर के अपने पदों से मिल सकता है या फिर समकालीन या परवर्ती लेखकों के कथनों से। प्रामाणिक पांडुलिपि के न होने से यह कहना असंभव है कि अमुक पद कबीर के अपने हैं कि उनके नाम से प्रचलित किए गए पदों में से हैं। एक काम हम ज़रूर कर सकते हैं – कबीर के सबसे पुराने संकलन, जिनकी तारीख पता हो उन्हें अपनी शोध का आधार बना सकते हैं। और इनसे इतना बताया जा सकता है कि कबीर के सबसे पुराने संकलनों से कबीर के जीवन के बारे में क्या पता चलता है। कबीर के पदों के तीन प्रमुख संकलन हैं – गुरु ग्रंथ साहब, पंचवाणी और बीजक। इनमें से 'ग्रंथ साहब संकलन' सबसे पुराना है और बीजक संभवतः सबसे बाद का।

अगर हम उन पदों को कबीर की जीवनी का आधार बनाएं जो कम-से-कम दो संकलनों में उपलब्ध हैं, तो कबीर के जीवन पर रोशनी डालने वाले पद कुल सात के करीब हैं। इनमें कबीर अपने आप को जुलाहा कहते हैं, लेकिन कभी भी यह नहीं बताते कि वे किस धर्म से जुड़े हुए हैं। एक में कबीर कहते हैं कि उन्होंने कपड़ा बुनना छोड़ दिया और राम भजन में लग गए हैं और उन्हें राम पर पूरा भरोसा है कि वह उनका व उनके परिवार का पोषण करेगा। दो ऐसे पद हैं जिनमें काज़ी द्वारा उन्हें गंगा में डुबोने और हाथी के पांव तले रौंदने के असफल प्रयासों की चर्चा है। लगभग चार पदों में मोक्षपुरी काशी को त्यागकर शूद्रों व म्लेच्छों की बस्ती 'मगहर' में आकर बसने की बात कही गई है। ग्रंथ साहब में इनके अलावा कुछ पद हैं जिनमें

* मसि कागद छुवो नहीं। कलम गहो नहिं हाथ॥
चारिउ युग का महातम। मुखहि जनाई बात॥

कबीर वाणी के संकलन

1. सबसे पुराना और प्रामाणिक है गुरु ग्रंथ साहब में गुरु अर्जुनदेव द्वारा संकलित कबीर पद। गुरु अर्जुनदेव ने लगभग सन 1604 में नानक आदि अनेक संतों की वाणी को संकलित किया जो 'गुरु ग्रंथ साहब' नाम से प्रसिद्ध है। इसकी काफी पुरानी पांडुलिपियां मिल जाती हैं और माना गया है कि सबसे पुरानी पांडुलिपि अमृतसर के स्वर्ण मंदिर में है।
2. उसके बाद है दादु पंथियों के संकलन, पंचवाणी और सर्बांगी जो लगभग सन 1550 के बाद संकलित किए गए थे।
3. कबीर पंथियों का अपना संकलन है बीजक। विद्वानों द्वारा माना गया है कि इसमें बहुत से बाद के पदों को शामिल किया गया है। बीजक की पांडुलिपि काफी बाद की है। इन कारणों से बीजक की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लग जाता है।

पारसनाथ तिवारी और फ्रांसीसी विदुषी शारलॉट वॉडविल ने तीनों संकलनों में से प्रामाणिक साखियों व पदों को चुनने का प्रयास किया है। वॉडविल ने उन साखियों व पदों को चुना जो तीनों संकलनों में पाए जाते हैं या किन्हीं दो संकलनों में ही पाए जाते हैं; अगर साखियों को ही लें तो केवल 182 ऐसी हैं जिनका उल्लेख दो या तीन संकलनों में मिलता है। इन साखियों के बारे में हम शायद यह कह सकते हैं कि ये कबीर की रचना के निकटतम रही होंगी।

कबीर की पत्नी और बेटे कमाल का ज़िक्र है। ज़ाहिर है कि इन पदों के अनुसार कबीर शादीशुदा थे। कबीर के अपने पदों से उनके जीवन के बारे में हमें यही जानकारी मिलती है जिसे हम कुछ हद तक प्रामाणिक मान सकते हैं – *काशी या मगहर का जुलाहा होना, शादी शुदा होना, भक्ति मार्ग को अपनाना, सत्ता के दमन-चक्र का सामना करना, मगहर में मरना।*

समकालीन भक्तों का कथन

नानक कबीर का ज़िक्र नहीं करते लेकिन अन्य समकालीन या निकट समकालीन भक्त कविगणों ने उनका जगह-जगह ज़िक्र किया है।

रैदास जो संभवत: कबीर के कनिष्ठ समकालीन थे, कबीर के बारे में कुछ प्रकाश डालते हैं। ज़ाहिर है कि कबीर अपने काल में ही काफी मशहूर हो चले थे। रैदास स्पष्ट करते हैं कि कबीर

मुसलमान जुलाहों के परिवार में जन्मे थे और,

"जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ बधु
करहि मानीअहि सेख सहीद पीरा।
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी
तिहू रे लोक परसिध कबीरा॥"

उनके घर में ईद-बकरीद को गाय काटी जाती थी और उनके परिवार में शेख, शहीद और पीर को माना जाता था। ऐसे परिवार में जन्मे कबीर तीनों लोक में वन्दनीय बने।

यह पद 'ग्रंथ साहब' में पाया जाता है। इस जानकारी से हम दो निष्कर्ष निकाल सकते हैं। एक यह कि उनके समकालीनों द्वारा कबीर जन्म से मुसलमान माने जाते थे और यह कि उनके परिवार के लोग हालांकि मुसलमान थे, इस्लाम धर्म से उनका जुड़ाव सिर्फ ईद-बकरीद मनाने और पीरों की मज़ारों पर दुआ मांगने तक सीमित था। तो कबीर के जीवन की एक और महत्वपूर्ण बात सामने आती है, कि *वे एक तरह से सीमांत मुसलमान परिवार के थे।*

सन 1585 के आसपास रामानंदी संप्रदाय के एक कवि-इतिहासकार हुए – नाभाजी। उन्होंने 'भक्तमाल' नामक एक काव्य की रचना की। इसमें उस दौर के भक्तों के बारे में चर्चा है। नाभाजी ने कबीर का सटीक विवरण दिया है जो उल्लेखनीय है;

"कबीर कानि राखि नहीं वर्णाश्रम षट
दरस की।
भक्ति विमुख जो धर्म सो अधर्म कर्म
गायो।
जोग जग्य व्रत दान भजन बिन तुच्छ
दिखायो॥
हिंदू तुरक प्रमान रमैनी शब्दी साखी।
पक्षपात नहिं वचन सब ही के हित की
भाखी॥
आरूढ़ दसा ह्वै जगत पर मुख देखई
नाहिन भनी।
कबीर कर्म न राखी नहीं वर्णाश्रम षट
दरसनी॥"

कबीर ने जातपात के भेदभावों को मानने से इनकार कर दिया; उन्होंने षडदर्शन को भी स्वीकार नहीं किया; ब्राह्मणों द्वारा विदित चार आश्रमों को भी ठुकराया; उनका मानना था कि भक्ति विहीन धर्म, अधर्म मात्र है और तमाम तपस्या, व्रत, उपवास, दान पुण्य आदि भजन बिना निरर्थक हैं, उन्होंने रमैनी, शबद, और साखियों के माध्यम से हिंदुओं व तुर्कों दोनों को उपदेश दिए; उन्होंने किसी से पक्षपात नहीं किया और सभी के लिए उपकारी उपदेश दिए; उन्होंने दृढ़ निश्चय के साथ बोला और दुनिया के लोगों को खुश करने का प्रयास नहीं किया।

यहां पर नाभाजी कबीर का जीवन वृत्तांत तो नहीं बताते हैं लेकिन उनके व्यक्तित्व और संदेश का बेजोड़ सार

पेश करते हैं। किसी और संदर्भ में नाभाजी कबीर को रामानंद के बारह शिष्यों में गिनते हैं। अन्य ग्यारह लोग या तो अज्ञात हैं या फिर अलग-अलग समय के हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि किसी खास कारण से कबीर और अन्य एकेश्वरवादी भक्तों को रामानंद से जोड़ने का प्रयास हो रहा था।

आईन-ए-अकबरी में

ग्रंथ साहब में कबीर पदों के संकलन से स्पष्ट हो जाता है कि सन 1600 तक आते आते उनके पद पूरे उत्तर भारत में गाए जाने लगे थे। कबीर तब तक इतने लोकप्रिय हो चुके थे कि मुगल शासक वर्ग भी उनके प्रभाव से अछूता न रह सका। बादशाह अकबर के विश्वासपात्र दरबारी और इतिहासकार अबुल फज़ल ने अपनी 'आईन-ए-अकबरी' में दो जगह कबीर का ज़िक्र किया है। इस किताब में अकबर के पूरे साम्राज्य का बारीक वर्णन है। उड़ीसा के 'पुरी जगन्नाथ' के संदर्भ में कहा गया है:

"कुछ लोग मानते हैं कि एकेश्वरवादी कबीर यहां दफनाए गए हैं, और आज भी इनकी कथनी और करनी के बारे में कई विश्वसनीय बातें सुनने को मिलती हैं। हिंदू और मुसलमान दोनों उनके समदर्शी प्रबुद्ध विचारों की खातिर उनका सम्मान करते हैं। जब उनकी मृत्यु हुई तो उनके शरीर को ब्राह्मण चिता पर जलाना चाहते थे और मुसलमान दफनाना चाहते थे।"

अवध के संदर्भ में अबुल फज़ल फिर लिखते हैं:

"कुछ लोग कहते हैं कि रतनपुर में एकेश्वरवादी कबीर का मकबरा है। आध्यात्मिक ज्ञान का दरवाज़ा उनके लिए खुला था और वे अपने समय के दकियानूसी विचारों का तिरस्कार कर चुके थे। हिंदी भाषा में आध्यात्मिक गूढ़ार्थ से भरपूर उनकी कई कविताएं आज भी उपलब्ध हैं।"

तो कबीर के मरने के लगभग 150 साल बाद यह स्थिति थी। नाभाजी या अबुल फज़ल कबीर के जीवन की विस्तृत चर्चा नहीं करते लेकिन कबीर के बारे में दोनों की समझ एक-सी है।

वैष्णव और भक्ति संप्रदाय ने कबीर को निस्संदेह अपनाया लेकिन सूफी परंपरा में कबीर का स्थान काफी विवादों से घिरा रहा। शायद इसीलिए अबुल फज़ल ने उन्हें एकेश्वरवादी (मुवाहिद) कहा न कि मुसलमान। सूफी साहित्य से पता चलता है कि देहली के सूफी मठों में कबीर के पद गाए जाते थे, लेकिन इस बात को लेकर काफी विवाद रहा कि कबीर के विचार इस्लामी संप्रदाय के अनुरूप हैं या नहीं।

उपरोक्त बातों से प्रतीत होता है कि सन 1600 तक कबीर की जीवनी की ओर लोगों का ध्यान विशेष रूप



से नहीं खिंचा था। हमारे स्रोतों का ज़्यादा ज़ोर कबीर के व्यक्तित्व और विचारों पर है। कबीर के गुरु और उनके अंतिम संस्कार के बारे में कुछ-कुछ अधपकी बातें ज़रूर मिलने लगती हैं। ये बातें बाद में जाकर विकसित रूप ले लेती हैं।

वैष्णव संप्रदाय में

1712 में प्रियादास ने नाभाजी के 'भक्तमाल' पर एक टीका लिखी। टीका का नाम था 'भक्तिरसबोधिनी'। इसमें कबीर के जीवन की कई चमत्कारी घटनाओं का ज़िक्र है। इन घटनाओं में से सबसे महत्वपूर्ण है – उनका रामानंद का शिष्य बनना। कबीर 'तुर्क' यानी मुसलमान थे तो उनका रामानंद का शिष्य बनना आसान नहीं था। वे एक दिन बनारस के घाट पर सुबह-सुबह जाकर लेट गए। रामानंद अनजाने में ऊषाकाल के अंधेरे में कबीर से टकरा जाते हैं और अनायास ही उनके मुंह से 'राम-राम' निकल पड़ता है। तो रामानंद के हाथों इस तरह कबीर की दीक्षा हुई!

प्रियादास ने 'गुरु ग्रंथ साहब' में पाए जाने वाले उस पद की विवेचना की है जिसमें कबीर और सुल्तान सिकंदर लोदी का आमना-सामना हुआ। टीकाकार बताते हैं कि काशी के पंडितगणों ने काज़ी से कबीर की शिकायत की। 'कबीर को ज़ंजीरों से बांधकर सुल्तान सिकंदर के सामने लाया गया। (सिकंदर तो देहली का बादशाह था। प्रियादास बताते हैं कि वह उन दिनों काशी का दौरा कर रहा था।) कबीर केवल राम के आगे झुक सकते थे, सो उन्होंने सुल्तान के आगे झुकने से इनकार कर दिया। कबीर को सज़ा-ए-मौत सुना दी गई। हाथ पांव बांधकर उन्हें गंगा में छोड़ दिया गया, फिर आग में डाल दिया गया और फिर मस्त हाथी के पैरों तले कुचलने के लिए डाल दिया गया... ज़ाहिर है कबीर को कोई हानि नहीं पहुंची और अंततः सुल्तान उनके पांव पड़ा।'

एक और किस्सा है कि देवलोक की अप्सराएं कबीर को मोहित करने के प्रयास में विफल होकर लौटीं और चतुर्भुज विष्णु ने कबीर को दर्शन दिया। ऐसे कई और किस्से हैं जिनका ज़िक्र यहां ज़रूरी नहीं है।

विचारधारा से उलट

लेकिन इस पूरे वृत्तांत में एक समस्या है। आमतौर पर माना जाता रहा है कि रामानंद 1410 में मरे (संभव है कि वे इससे काफी पहले ही स्वर्ग सिधार चुके हों क्योंकि तब तक उनकी उम्र 111 वर्ष हो गई थी)।

एक उत्तर मुगलकालीन चित्र में कबीर। यह चित्र लंदन के ब्रिटिश संग्रहालय में रखा हुआ है।

दूसरी ओर सुल्तान सिकंदर लोदी का शासन काल 1488 से 1512 था। अगर कबीर वाकई 1410 के आसपास रामानंद के शिष्य बने तो उनका जन्म कम-से-कम 1395 के आसपास हो जाना चाहिए था। सिकंदर लोदी से मुलाकात करने के लिए उन्हें और 100 साल इंतज़ार करना पड़ता!

सिकंदर तो उन्हें मार नहीं पाया, तो निश्चित ही कबीर कुछ और वर्ष जीवित रहे होंगे, यानी वे सौ साल से भी ज़्यादा जीवित रहे! दंत कथाओं में सौ साल से ज़्यादा जीवित रहना कोई असामान्य बात नहीं है, लेकिन यथार्थ में यह थोड़ा मुश्किल लगता है।

अठारहवीं शताब्दी (यानी प्रियादास के समय में जबकि उत्तर भारत में वैष्णव संप्रदाय काफी संपन्न और शक्तिशाली संप्रदाय बन चुका था) तक आते-आते कबीर की जीवनी में हम नए मोड़ देखते हैं – "कबीर के व्यक्तिगत जीवन की कई घटनाओं पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। कबीर को विशुद्ध रूप से वैष्णव संप्रदाय से जोड़ने का प्रयास दिख रहा है; कबीर को रामानंद का शिष्य बनाया गया है। लेकिन वे अन्य शिष्यों की तरह रामानंद से उनके संप्रदाय के ग्रंथों व मतों का अध्ययन नहीं करते। बल्कि उन्होंने रामानंद से सिर्फ भूले-भटके 'राम राम' शब्द सुना और चमत्कारी रूप से उसी से उन्हें समस्त वैष्णव संप्रदाय का ज्ञान हो गया और वे तुर्क से वैष्णव बन गए।" कबीर का रामानंद से नाता जोड़ने का यह प्रयास काफी बनावटी-सा लगता है। उपरोक्त अन्य दो घटनाओं से भी ऐसा ही आभास मिलता है।

राजा द्वारा किसी विरोधी को मारने के प्रयास में पानी में डुबोना, आग में जलाना और हाथी से कुचलवाना जैसी बातें मध्यकाल में हिंदू भक्ति साहित्य में अच्छी तरह से स्थापित थीं। (लगभग यही बातें तमिल भक्त अप्पर के संदर्भ में तेरहवीं शताब्दी के एक भक्त जीवन संग्रह में मिलती हैं।) तपस्वियों व भक्तों को अप्सराओं द्वारा लुभाए जाने की बात पौराणिक कथाओं में काफी सामान्य है।

कबीर आजीवन, सगुण ईश्वर उपासना के पक्ष में नहीं थे और मौका मिलने पर ईश्वर की सगुण कल्पना का मज़ाक उड़ाते रहे थे। वे अपने ही घट में ईश्वर को पाने की बात करते थे। लेकिन वैष्णव साहित्य के अनुसार उनका ईश्वर से साक्षात्कार कैसे होता है – चार हाथों वाले मुकुटधारी विष्णु के दर्शन से!

कबीर ने हिंदू, तुरक और जोगी, सभी से अपने आपको अलग रखा, सभी को समान रूप से फटकारा और समझाया। लेकिन अब उनके माथे पर टीका लगाकर उन्हें वैष्णव बना दिया गया।

आज तक जारी प्रयास

आज से कोई पच्चीस साल पहले की बात है। एक जगह कथा का कार्यक्रम था। कथाकार दक्षिण भारत के पंडित थे। वे मध्यकालीन भक्ति संतों की जीवनियां सुना रहे थे। रोज़ एक भक्त की कहानी सुनाई जाती थी। एक दिन कबीर की भी बारी आई। कई लंबे और रोचक किस्से सुनाए गए उनके बारे में। उनमें से एक मुझे आज भी याद है – "एक बार कबीर काम से कहीं बाहर गए थे। इसी बीच काशी के राजा ने अनजाने में गोहत्या या किसी ब्राह्मण बालक की हत्या कर दी थी। राजा चिंताकुल और शोकाकुल होकर कबीर के घर आ पहुंचा कि इस महापाप से मुक्ति कैसे पाए। कबीर तो घर पर नहीं थे। सो उनके पुत्र कमाल ने राजा को आश्वस्त किया और कहा कि एक चौराहे पर खड़े होकर तीन बार राम का नाम लो, तुम्हारे पाप धुल जाएंगे। राजा खुश होकर लौटा। कबीर के घर लौटने पर बालक ने उन्हें पूरी बात बताई। बात सुनकर कबीर अत्यंत क्रुद्ध हुए। गुस्से में उन्होंने कमाल को मार-मार कर उसका भुरता बना दिया। आस-पड़ौसी उन्हें रोकने आए। किसी को भी समझ नहीं आया कि कबीर आखिर बालक से क्यों नाराज़ हैं। जब कबीर का गुस्सा ठंडा हुआ, तो उन्होंने बताया कि इसने कैसे कह दिया कि 'तीन बार' राम का नाम लेने की ज़रूरत है। राम के नाम को एक बार ही लेने से तमाम पाप धुल जाते हैं।" मुझे पच्चीस साल पहले भी यह बात पची नहीं थी – भला दो बार ज़्यादा राम नाम लेने से क्या हर्ज हो सकता है?

इस किस्से को बताने का मकसद यही है कि कैसे किसी के वास्तविक विचारों को एकदम दरकिनार करके उसे ऐसे किस्से कहानियों के माध्यम से शक्तिशाली परंपराओं में शामिल किया जा सकता है।

कबीरपंथी साहित्य में

लेकिन इसी दौरान कबीरपंथियों का भी उदय होने लगता है। पंथ का शुरुआती इतिहास काफी अस्पष्ट है। यद्यपि कबीरपंथी मानते हैं कि कबीर ने खुद इस पंथ की शुरुआत की थी। नानक ने अपने अनुयाइयों के नेतृत्व के लिए गुरु पद की स्थापना की थी। लेकिन कबीर ने भी ऐसा किया इसका कोई समकालीन प्रमाण नहीं है। संभवत: कबीरपंथ ने लगभग सत्रहवीं शताब्दी के अंत या अठारहवीं शताब्दी में ज़ोर पकड़ा। उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश के दलित जाति के लोग इस पंथ की ओर आकृष्ट हुए। पंथ के बड़े-बड़े संपन्न मठ बने, जिन्हें कई जगह राजाश्रय प्राप्त हुआ। पंथ का यह सतत प्रयास रहा कि ब्राह्मण-वादी आदर्शों को अपनाकर दलित,



कबीर पंथियों के कबीर

"चमत्कारी रूप से एक विधवा ब्राह्मण महिला की कोख में बगैर पुरुष संबंध के कबीर अवतरित हुए...।" कुछ यह भी मानते हैं कि कबीर कमल के फूल पर तैरते पाए गए। इस बच्चे को मुसलमान जुलाहे परिवार ने पाला पोसा।

ज़ाहिर है कि जीवनी के लेखकों को कबीर का मुसलमान होना काफी अखर रहा था। वे नहीं चाहते थे कि कबीर का जन्म ऐसे परिवार में हो। ब्राह्मण विधवा की कोख से जन्म लेने की कहानी बनाना इसी मनोवृत्ति का परिणाम है। कई लेखक यह भी बताते हैं कि बच्चे ने चमत्कारी रूप से अपनी सुन्नत को भी रोका। आखिर वह मुसलमान नहीं था ना!

समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त करें। इसीलिए स्वच्छता, शाकाहारी भोजन, मद्य-धूम्रपान निषेध, आदि पर ज़ोर दिया जाने लगा। साथ ही ब्राह्मणवादी समाज, कबीरपंथियों को प्रतिष्ठित माने इसका भी भरपूर प्रयास किया गया। इसी प्रयास का असर उनके द्वारा लिखी गई कबीर की जीवनियों में झलकता है।

आजकल कबीरपंथियों द्वारा लिखी जाने वाली कबीर की जीवनियां मुख्य रूप से अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी के साहित्य पर आधारित प्रतीत होती हैं। इनमें कबीर को ब्रह्म-तत्व के अवतार के रूप में पेश किया जाता है —

क्या खोजा और क्या मिला

तो हम निकले थे कबीर की जीवनी की खोज में। लेकिन हमें मिला उस जीवनी का इतिहास! उनकी वाणी की तरह उनकी जीवनी भी जीवंत रही है जो सुनने-सुनाने वालों की ज़रूरतों के हिसाब से बढ़ती, बदलती गई। ऐसे में एक इतिहासकार भला क्या कर सकता है?

वह इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि कबीर के जीवन से संबंधित कोई समकालीन प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं होने के कारण कोई ठोस

बात नहीं कही जा सकती है। सामान्य रूप में कबीर की जीवनी के नाम से उपलब्ध जानकारी मनगढ़ंत और अविश्वसनीय है। लेकिन इस पूरी प्रक्रिया में इतिहासकार ने शायद 'बेहद के मैदान' की झलक पाई होगी। कबीर, कागद पर नहीं है, वह लोगों की जुबान पर ज़िंदा है। लोगों ने उसके अक्खड़ दर्शन, किसी ताकत से समझौता न करनेवाली तार्किक दृष्टि, मानवतावाद और अखंड प्रेम, इनको आत्मसात कर लिया है। उस दृष्टिकोण को जहां भी वे अपनाते हैं, वहां कबीर फिर से जीवित हो जाता है। यह वास्तव में एक 'बेहद का मैदान' है।

अब रहा सवाल जीवनी का। हमने देखा कि जो कबीर के विचारों से अवगत थे उन्होंने उसकी जीवनी पर ध्यान नहीं दिया। कबीर की जीवनी उनके लिए महत्वपूर्ण बनती गई, जो कबीर के विचारों से हट रहे थे या उनको पलट रहे थे। वे कबीर की दृष्टि की जगह उनकी मूर्ति स्थापित करना चाहते थे।

पंड़ित मुल्ला जो लिखि दीया।
छांडि चले हम कछू न लीया॥
रिदै खलासु निरख ले मीरा।
आजु खोजि खोजि मिलै कबीरा॥

(सी. एन. सुब्रह्मण्यम – एकलव्य के सामाजिक अध्ययन शिक्षण कार्यक्रम समूह के सदस्य।)



इस बार का सवाल

सवालः दूध में नींबू डालने से वह फटता क्यों है?

गगन बंसल, कक्षा सातवीं
गढ़ीपुरा, हरदा,
ज़िला होशंगाबाद

हो सकता है कि कभी आपने भी इस सवाल के बारे में सोचा हो। अगर आपके पास इससे जुड़ी कोई जानकारी है तो हमें लिख भेजिए। हमारा पता हैः संदर्भ, द्वारा एकलव्य, कोठी बाज़ार, होशंगाबाद, 461 001.